शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

उत्तर आधुनिक साहित्य के दलित सन्दर्भ

डॉ० रश्मि चतुर्वेदी

असि० प्रो०, हिन्दी विभाग, महिला महाविद्यालय, किदवईनगर, कानपुर

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

# उत्तर आधुनिक साहित्य के दलित सन्दर्भ

- डॉ० रश्मि चतुर्वेदी

***उत्तर आधुनिक साहित्यिक प्रवृत्तियों में दलित विमर्श का प्रादुर्भाव शोषित-दलितों के अस्मिता एवं स्वाभिमान जागरण के रूप में हुआ था। सम्प्रति यह दलित-चिन्ताओं के मूल-प्रश्नों से भटकता हुआ प्रतीत हो रहा है, यह शोध अध्ययन इन्ही बिन्दुओं को अनावृत्त करता है।***

***विषय संकेतः- दलित साहित्य, उत्तर आधुनिकता***

उत्तर आधुनिकतावाद महज एक वाक्य या कोई मुहावरा नहीं अपितु इक्कीसवीं सदी की एक हक़ीकत है । एक अर्थ विशेष में उत्तर आधुनिकता, का अंत भी है और विस्तार भी। एक ऐसा 'ग्लोबल गेम' जिसे हम सभी न चाहकर भी खेलने के लिए मजबूर हैं । दरअसल 'पोस्ट मॉडर्निज़्म या उत्तर आधुनिकतावाद एक व्यापक अवधारणा है-एक अत्यंत विवादास्पद पारिभाषिक शब्द । एक ऐसा पारिभाषिक शब्द जिसे परिभाषा में बाँधा नहीं जा सकता । कवल उसके लक्षणों, चिह्नों को ही परिलक्षित किया जा सकता है (जो शायद तकनीकी-क्रांति के भीतर से उपजे परिवर्तन की अनेक दिशाएँ हैं ।

इस युग ने कुछ ऐसी करवट बदली कि हमारे बैंक, ऑफिस, सुपरबाज़ार, मॉल्स, हॉस्पिटल, होटल, स्कूल, घर, धर्म, दर्शन, साहित्य आदि मं सोच के सभी पुराने पैटर्न पूरी तरह चरमरा गए और हम हाईटेक, ई-टेक हो गए । माइंड, मनी, मसल या यों कहें कि काम, कम्प्यूटर, कैश ये तीनों मिलकर इक्कीसवीं सदी की चौखट पार करके हमारे घरों में चिन्तन और स्मृति में छा गए हैं । एक मैसिव रि-स्ट्रक्चरिंग, एक नया विश्व साम्राज्यवाद, विश्व उपनिवेशवाद सामने खड़ा है और यह तीसरी दुनिया के देशों को अपना स्थायी उपनिवेश बनाने की तैयारी में है ।

इस उत्तर आधुनिकता के पूरे परिदृश्य को 'आल्विन टाफलर' ने अपनी तीन पुस्तकों (यूचर-शॉक, दि थर्ड वेव और पॉवर शिट) में समग्रता से प्रस्तुत किया है । इन तीन पुस्तकों का एक ही विषय है- 'नवीन परिवर्तन' यानी 'राइज़ ऑफ दि न्यू पॉवर सिस्टम' । पुरानी सभ्यता-संस्कृति के मूल्यों को अपर्याप्त घोषित करने के बाद नई सभ्यता संस्कृति का तंत्रजाल बिछाया जा रहा है। तकनीकी क्रान्ति के द्वारा हर पुराने विचार को 'उत्तर' (पोस्ट) घोषित किया जा रहा है, ताकि नया तकनीकी शैतान अपना प्रजातंत्र कायम कर सके, जिसे मीडिया एक नई ताकत दे रहा है ।

दरअसल उत्तर आधुनिकतावाद एक व्यापक संश्लिष्ट अवधारणा है। इस शब्द के अनेक अर्थ हैं। मूलतः यह बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध की नव्य पूँजीवादी, नव्य साम्राज्यवादी, नव्य उपनिवेशवादी, नव्य संरचनावादी, नव्य सांस्कृतिक साम्राज्यवादी विचारधारा (आइडियोलॉजी) है। अपने समय की क्रांतिकारी प्रवृत्ति, और एक ऐसा सैद्धान्तिक वाद-विवाद, कला साहित्य संवाद, विश्वभर के वर्तमान का वृतांत, सामाजिक राजनीतिक परिवर्तनवाद का नवदर्शन, बहुलतावाद, केन्द्रवाद को तोड़कर परिधि की ओर बढ़ता, अपनी जड़ों की ओर लौटता एक अनंत खुला विचार क्षेत्र है (जिसमें सभी पुरानी विचारधाराओं, वादों-प्रवृत्तियों, संस्थानों का अंतवाद घोषित है।

उत्तर आधुनिकता यानी सभी पुरानी सीमाओं को तोड़ता 'पावर शिट' का नया विज्ञान। जिसने मानवीय चिन्तन, संवेदना, साहित्य, धर्म, दर्शन, विचारधारा, इतिहास, सभ्यता, संस्कृति, मूल्य व्यवस्था-सभी को उत्तर 'पोस्ट' घोषित कर दिया है ।

पुराने चिन्तन, पुराने साहित्य, पुरानी कला का 'क्लासिकल' ढाँचा अनुपयोगो करार दे दिया गया। कलाकृति को केन्द्र में रखकर कलाकृति के रूप का विश्लेषण 'नई समीक्षा' का संकल्प था । शिकागो स्कूल

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013



डॉ० रश्मि चतुर्वेदी

असि० प्रो०, हिन्दी विभाग, महिला महाविद्यालय, किदवईनगर, कानपुर

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

के नव्य अरस्तूवादी आलोचक आर0एन0 क्रेन ने कृति के मूल्यांकन के लिए रूप संरचना केन्द्रित दृष्टि, संघन-पाठ-विश्लेषण-पद्धति को अपर्याप्त ठहराते हुए कहा कि रूप संरचना की यह पद्धति लघु-रचनाओं के लिए भले ही ठीक हो पर वृहत रचनाओं-उपन्यास, नाटक, महाकाव्य की दीर्घ संरचनाओं के लिए ना काफी है। 'फ्रेंक कर्मोड' ने 'नई समीक्षा' के रोमांटिक प्रतीकवादी त्त्वों को विज्ञान-विरोधी कहा और नई समीक्षा को 'इर्रेशनल' तक विरोधी तक कह डाला । 'नार्थ फ्राई' ने 'नई समीक्षा' से असंतुष्ट होकर मिथक आलोचना का पक्ष लिया । आधुनिकतावाद और संरचनावाद पर चारों ओर से आक्रमण हुआ और 'रिचर्ड्स तथा टी0एस0 इलियट' के चिन्तन को निरर्थक ठहराया गया। एफ0आर0 लीविस के शिष्य रेमंड विलियम्स साहित्य के समाजशास्त्रीय अध्ययन की दिशा में प्रवृत्त हुए लेकिन उत्तर आधुनिकतावाद ने मार्क्सवादी समाजशास्त्रीय आलोचना को महत्त्वहीन घोषित कर दिया ।

यही वे ऐतिहासिक विचारधाराएँ थीं जो निर्मल वर्मा के शब्दों में कहें तो 'मानववाद' की छलनाओं का केन्द्र थीं । तकनीकी क्रान्ति ने गाँधी, जयप्रकाश और लोहिया के दर्शन का भी गला घोंट दिया। लेकिन अम्बेडकर का प्रभाव दलित समाज, दलित साहित्य, राजनीति में अवश्य गहराया, यह पूरा दलित विचार दर्शन उत्तर आधुनिकता की अवधारणा पर हस्ताक्षर है।

यही वह समय था, जब 'जॉक देरिदा' ने अपना डमरू बजाकर 'थियरी ऑफ डीकांस्ट्रक्शन' अर्थात् विनिर्मितवाद या विखंडन का सिद्धान्त प्रतिपादित किया। साहित्य समीक्षा के क्षेत्र में देरिदा के 'विखंडनवाद' का व्यापक असर हुआ। उसने साहित्य चिन्तन की कन्वेंशनल पद्धति में मौजूद 'रूप' और 'प्रकृति' की अवधारणा को पूरी तरह बदल डाला।

साहित्यिक दृष्टिकोण से उत्तर-आधुनिकतावाद पर यदि प्रकाश डालें तो स्पष्ट होता है कि इसका चिन्तन और साहित्य कर्म पर गहरा प्रभाव पड़ा है। दरअसल उत्तर-आधुनिकतावाद किसी शाश्वत मूल्यांकन के प्रतिमान को स्वीकार नहीं करता है। उसका तर्क है कि साहित्य के शाश्वतवादी प्रतिमान अभिजात्य वर्गों द्वारा निर्मित-प्रतिष्ठित किए गए हैं। अभिजात्यवादी-वर्गों का वर्चस्व होने के कारण इनमें दमित-शोषित, अपमानित, आवाज़रहित, अल्प-समूहों के साहित्य को न केवल 'उपेक्षित' रखा गया है बल्कि उसे हीन मानकर नज़र अन्दाज करने की एक सुनियोजित साज़िश रची गई है ।

उत्तर आधुनिकतावाद पूरी ताकत से आभिजात्यवादी साज़िश के चक्रव्यूह को तोड़ना चाहता है। इसीलिए वह इस उपेक्षित दमित साहित्य का एक नया सौन्दर्यशास्त्र, समाजशास्त्र, काव्यशास्त्र निर्मित करना चाहता है। उसका विश्वास है कि अब कोई स्वीकृत सौन्दर्यशास्त्र अर्थवान नहीं है और न कोई स्वीकृत कृति कालजयी। विश्वव्यापी 'रामचरितमानस' हो या 'कामायनी' इनकी महानता को उत्तर आधुनिकतावाद अस्वीकार करता है (क्योंकि इन सब में अभिजात्य की सृजन माया का प्रपंच है। फिर अब कोई सर्वमान्य मानदण्ड (केनन) भी तो नहीं है, कविता के प्रतिमान अब सड़ गल गए हैं, न रस, प्रतिमान है, न बिम्ब।

आज तक हम 'रामचरित मानस' या 'कामायनी' या 'राम की शक्ति पूजा' या 'गोदान' जैसी कृतियों को बौद्धिक-सांस्कृतिक -सौन्दर्यात्मक तौर पर विशिष्ट मानते रहे हैं । लेकिन यदि हम इन कृतियों को 'डि-कंस्ट्रक्ट' विखंडन करें तो पाते हैं कि इनके पाठ (टेक्स्ट) के भीतर मौजूद उपपाठों और भाषा के पीछे छिपी अभिजात्य विचारधारा, संवेदना, रूपयोजना, लयविधान, उपमान-योजना स्पष्ट दिखाई देने लगती है। कृति के 'पाठ' (टेक्स्ट) को इस प्रकार से पढ़ना ही विखंडनवाद है। यह पाठ पढ़ने की पद्धति 'नई समीक्षा' की 'क्लोज-रीडिंग ऑफ टेक्स्ट' की पद्धति से एकदम भिन्न है। उत्तर संरचनावादी पद्धति यह मानकर चलती है कि लेखक भाषिक संरचना के द्वारा अपने वैचारिक पूर्वाग्रहों- आशयों-अभिप्रायों को कितना ही छिपाने का प्रयत्न क्यों न करें- विखंडन के द्वारा वे प्रकट हो जाते हैं, और पूरे अभिजात्यवादी वर्ग की कलई खुल जाती है ।

उत्तर आधुनिकतावाद ने साहित्यिक-चिन्तन की कई नई वैचारिक पद्धतियाँ, प्रविधियाँ-शैलियाँ विकसित की हैं । इन वैचारिक पद्धतियों में सांस्कृतिक-अध्ययन क्षेत्र, नव-इतिहासवाद, नवमिथकवाद, सबाल्टर्न स्टडी (अधीनस्थों का अध्ययन), नारीवाद (फेमनिज़्म-लेस्वियनिज़्म), अश्वेत पीड़ा का अध्ययन, दलित-दमित साहित्य का अध्ययन आदि को जगह मिलती है ।

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research

मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013

उत्तर आधुनिक साहित्य के दलित सन्दर्भ

डॉ० रश्मि चतुर्वेदी

असि० प्रो०, हिन्दी विभाग, महिला महाविद्यालय, किदवईनगर, कानपुर

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

स्वतन्त्रता के बाद का साहित्य 'मोहभंग' की चेतना से भरा हुआ है। हमारी संवेदना में उमड़ने-घुमड़ने वाली भाववृत्तियाँ जिस जटिल आधुनिक भाव-बोध से निर्मित हो रही हैं उनके मूल में उत्तर-पूँजीवादी, भूमंडलीकरण, बाज़ारवाद, उपभोक्तावादी संस्कृति का खेल है ।

मैथिलीशरण और जयशंकर प्रसाद के सांस्कृतिक -पवित्रतावाद, मानववाद को अज्ञेय और मुक्तिबोध माचिस नहीं दिखा सके, क्योंकि हम बाँधे हुए थे पट्यिाँ संस्कारों की, इन संस्कारों की पट्यिों को राजकमल चौधरी ने खोला, धूमिल, रघुवीर सहाय ने खोला और खोला इधर कृष्णा सोबती और मनोहर श्याम जोशी ने। हिन्दी में उत्तर आधुनिकतावादी लेखन के आदि प्रवर्तक के रूप में स्थापित मनोहर श्याम जोशी ने ही ध्यान दिलाया कि हम लोग अब अज्ञेय, कमलेश्वर, मोहन राकेश, शिव प्रसाद सिंह और नरेश मेहता की दुनिया से बहुत आगे निकल आए हैं। उत्तर-आधुनिक पीढ़ी की तरह साहित्य भी अमेरिका के दबाव में है उस पर भी पूँजीवादी, उपभोक्तावादी, बाज़ारवादी संस्कृति का पूरा असर है। 'आल्हा' और 'फाग' वाला देश गायब हो रहा है। वाचिक-परम्परा वाले सूरदास और लोक-संस्कृति की कथाओं से भरे तुलसीदास, क्रान्तिकारी कबीर और प्रेम दर्शन के संत जायसी सभी अपना अर्थ खो रहे हैं। असल में साहित्य ही केन्द्र से हटकर परिधि पर आ गया है। उत्तर आधुनिकतावाद ने साहित्य के सभी साहित्यिक मानदण्डों को भी ध्वस्त कर दिया है।

आज देश में कई तरह के दलित हैं और कई किस्म के दलित आन्दोलन हैं। इन आन्दोलनों में कई तरह की विचारधाराएँ हैं और नाना प्रकार के वैचारिक मुद्दे । लेकिन नया दलित विमर्श, समतामूलक, शोषण मुक्त, आत्म-सम्मानपूर्ण, छुआछूत रहित समाज बनाने के लिए प्रतिबद्ध दिखाई देता है। उत्तर आधुनिकतावादी दलित साहित्यकार न तो सवर्ण सहानुभूति की जरूरत महसूस करता है, और न ही उसे मार्क्सवादी मानवता की आवश्यकता है। गाँधी और लोहिया से भी वे नमस्कार कर चुके हैं और तो और अम्बेडकरी धर्मान्तरण की नीति से भी दलितों को राहत की राह नहीं मिल रही है । इसलिए वे अपना रास्ता स्वयं तलाश रहे हैं।

अब प्रश्न उठता है कि हिन्दी साहित्य के इस नए उत्तर-आधुनिकतावादी आन्दोलन को जातिवादी रंगत की राजनीति से क्यां जोड़ दिया गया है। दलित साहित्य और गैरदलित साहित्य अगड़ी जातियों द्वारा रचा गया वर्चस्ववादी साहित्य और पिछड़ी जातियों द्वारा सृजित पीड़ा-यातना का साहित्य, जैसे विभाजन को मानने और मनवाने के प्रयास के पीछे दलित साहित्य की राजनीति का 'हिडेन एजेण्डा' क्या है? दलित साहित्य को 'साहित्य' कहना भी चाहिए या यह कोरा प्रचारवाद है। आज क्यों साहित्य की राजनीति करने वालों को दलित साहित्य घाटे का सौदा दिखाई देता है और नारीवादी विमर्श फलता-फूलता व्यापार?

मराठी-गुजराती, कन्नड़ या तमिल भाषाओं के दलित साहित्य की बात छाड़ दें और केवल हिन्दी के दलित साहित्य की ही बात करें तो हिन्दी के दलित साहित्य में एक भी ऐसी अविस्मरणीय कृति नहीं है जिसे हिन्दी को दलित साहित्य की देन कहा जा सके । हिन्दी में दलित साहित्य लिखा न जा रहा हो ऐसी बात नहीं है। लेकिन जो लिखा जा रहा है, वह बहद सतही और सन्नाटापरक् है उस पर थोड़ी बहुत चर्चा तो की जा सकती है, लेकिन 'क्लॉसिक संवेदना' का स्तर नहीं पाया जा सकता। लेकिन जिसे हिन्दी का 'ब्राह्मणवादी साहित्य' कहकर कोसा जा रहा है उसमें 'अपूर्व-अविस्मरणीय' काव्य-नाटक-उपन्यास हैं। विचार को गम्भीरता से न लेन वाले लोग बिना किसी बड़ी तैयारी के हिन्दी साहित्य के दंगल में कच्छा पहनकर कूद पड़े मात्र कोलाहल से बात नहीं बनती साहित्य तो 'साधना' है, तप है, भीतर का ताप है, चित्त का निचोड़, साहित्य केवल विवाद नहीं है वैचारिक प्रतिबद्धता भी नहीं है। वह शब्द में अर्थ का पूरा समाज है। वक्त-वक्त की खंडित स्मृतियाँ-तल्ख़ियाँ, विसंगतियाँ जो जीवन परिदृश्य को झनझनाकर आलोकित कर देती हैं, साहित्य नहीं है। लेकिन जब भारतेन्दु 'अंधेर नगरी' या प्रेमचन्द 'ठाकुर का कुआँ' में वक्त की व्यवस्था को उघाड़ कर रख देते हैं, उस समय वे रचना से वक्त मं एक ऐसा छेद या सुराख कर रहे होते हैं कि हम उसके साथ आर-पार देख सकें, उस समय न भारतेन्दु बनिया होते हैं, न प्रेमचन्द कायस्थ। वे मात्र सर्जक होते हैं! देश और काल जाति और धर्म से ऊपर उठे हुए । लेकिन आज दुर्भाग्य यह है कि हम प्रेमचन्द और निराला के दलित व्यथा-कथा वाले लेखन को दलित साहित्य में स्थान देने के लिए तैयार नहीं हैं। हम प्रेमचन्द निराला को गैर दलित

शोध संचयन
SHODH SANCHAYAN
ISSN 2249-9180 (Online)
ISSN 0975-1254 (Print)
RNI No.: DELBIL/2010/31292

An Internationally Indexed Refereed Research Journal & A complete Periodical dedicated to Humanities & Social Science Research
मानविकी एवं समाज विज्ञान के मौलिक एवं अंतरानुशासनात्मक शोध पर केन्द्रित

Half Yearly

Vol-4, Issue-1
15 Jan-2013



डॉ० रश्मि चतुर्वेदी

असि० प्रो०, हिन्दी विभाग, महिला महाविद्यालय, किदवईनगर, कानपुर

www.shodh.net

Web Portal of Humanity & Social Science Research

रचनाकार घोषित करते हैं। यह हमारा दलित-गैर दलित विभाजन क्या एक अंधी गली में ले जाकर हमें नहीं छोड़ देता? महज़ स्थापित होने के लिए खारिज करना, दुर्भाग्यपूर्ण है।

ऐसे उत्तर-आधुनिक माहौल में दलित साहित्य की पीड़ा यह है कि उसके सामने कोई ठोस मानक नहीं हैं, ऐसे में दिशाहीनता की स्थिति पैदा हुई है। प्रतिबद्धता की प्रेरणा का अभाव है। विकल्प के रूप में सिर्फ विरोध का संकल्प। आक्रोश प्रतिशोध से बात बनती नहीं है। सृजन कर्म के लिए साहित्य की मौलिक, स्पॉन्टेनिअस उड़ान, बहाव आवश्यक है जो एकांगी दृष्टिकोण से भटक जाता है । 'वाइज्ड' आउटलुक उसे दबा देता है। चेतना का सहज उन्माद जब बुद्धि बल द्वारा निर्देशित होता है तो वह अपने मानक नहीं गढ़ पाता है ।

दलित साहित्य अपने ही दृष्टिकोण के दबाव में आगे बढ़ रहा है, जो उत्तर-आधुनिक माहौल के यूजन से संक्रमित है: अथवा संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। इस प्रकार दलित साहित्य उत्तर-आधुनिकता के दौर में दृष्टि और दिशाहीन होकर विकलांग हो गया है, जिसको पढ़कर न प्रेरणा मिलती है, न ही उत्साह और न ही उन्माद जागृत होता है। न ही कोई मानक गढ़ा जा रहा है, और न ही सामाजिक परिवर्तन का प्रतिनिधित्व कर रहा है। मैं इस स्थिर स्थिति में तालाब में पड़ने वाले एक-आधा कंकड़ से उठी तरंगों को महज़ अपवाद मानती हूँ । यदि 'रेशनलिटी को टाटेलिटी' में देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि उत्तर-आधुनिकता ने दलित साहित्य को कई खेमों में बाँटकर अपने आपको अपनी ही जड़ों से काट लिया है। अम्बेडकर की मूल चेतना से भटका साहित्य उनके स्वप्न को कैसे साकार कर सकता है? दलित साहित्य भंडार से यदि मराठी दलित साहित्य को निकाल दिया जाय तो हिन्दी दलित साहित्य की स्थिति काफी दयनीय है। कुल मिलाकर उत्तर आधुनिकता ने दलित साहित्य के मूल प्रश्नों को छल से हाशिये पर धकेल दिया है। बेहतर होगा कि संक्रमण के दौर में दलित साहित्य जब तक अपनी नई परिभाषा नहीं गढ़ लेता, उसे अपनी मूल चेतना और जड़ों से जुड़ा रहना चाहिए। वर्तमान में दलित साहित्य को गुटबाजी और वादों की विचारधारा में न उलझकर केवल अपने तेवर को बरकरार रखते हुए अम्बेडकर के दर्शन से जुड़ने की आवश्यकता है।

दरअसल सच यह है कि 'ग्लोबलाइजेशन' के उत्तर-आधुनिकतावादी रुझानों का दलित साहित्य पर असर पड़ना स्वाभाविक है जिसे अश्लीलता कहा जा रहा है। परन्तु यह अश्लीलता देहवाद की उपभोक्तावादी संस्कृति का फल है। परन्तु वास्तविकता यह है कि भारतीय दलित साहित्य की अपनी स्वतंत्र अस्मिता है और यह अस्मिता डॉ0 अम्बेडकर के चिन्तन से जुड़कर ही शक्ति पा सकती है। यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि 'ग्लोबलाइजेशन' का सारा धावा दलित साहित्य को या अन्य की तरह भारतीय समकालीन साहित्य, सभी के ऊपर अपना वर्चस्व कायम कर रहा है। हाशिए पर पड़े लोग केन्द्र में आ ही रहे थे कि उत्तर-आधुनिकतावाद ने उन्हें फिर केन्द्र से धकेलकर गुमराह कर दिया। अत: ऐसे दौर में दलित साहित्य के रचनाकारों को सतर्क रहने की आवश्यकता है।

## सन्दर्भ सूची

1. पालीवाल, कृष्ण दत्त, 'उत्तरआधुनिकता और दलित साहित्य', वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2008
2. सिंह, एन0, 'मायावती और दलित चिन्तन', साहित्य संस्थान, गाजियाबाद, 2007
3. कर्दम, जय प्रकाश, 'इक्कीसवीं सदी में दलित आन्दोलन', पंकज पुस्तक मन्दिर, दिल्ली, 2007
4. पचौरी, सुधीश, 'उत्तर आधुनिक प्रस्थानबिंदु', आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली, 2000
5. मीणा, श्रवण कुमार, 'दलित साहित्य और समकालीन सन्दर्भ', संजय प्रकाशन, दिल्ली, 2009
6. चौहाण, धनंजय, 'भारतीय साहित्य एवं दलित चेतना', ज्ञानोदय प्रकाशन, कानपुर, 2010
7. चमनलाल, 'दलित साहित्य एक मूल्यांकन', राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 2008
8. गुप्ता, रमणिका, 'दलित हस्तक्षेप', शिल्पायन, दिल्ली, 2004
9. सरार्फ, रामकली, 'दलित लेखन का अन्तर्विराध', शिल्पायन, दिल्ली, 2009
10. दुबे, अभय कुमार, 'आधुनिकता के आइने में दलित', वाणी प्रकाशन प्रकाशन, दिल्ली, 2007
11. Nimbalkar, Waman, 'Dalit Literature: Nature and Role', Prabodhan Prakashan, Nagpur, 2006

SHODH SANCHAYAN